वार्षिक मूल्य 50 रूपये

धर्म जीवन

दिसम्बर – 2018

देवात्मा अंक

* दुनिया की वर्तमान अवस्था में मेरा आविर्भाव
* मेरा आविर्भाव और मेरा जीवनव्रत
* उच्चबोध – जनित मेरी बेचैनी वा व्याकुलता
* मेरे सम्बन्धियों की वर्तमान अवस्था और मैं
* मुझमें आत्मिक शान्ति और देवानन्द
* नाना दुर्घटनाओं में मेरी आन्तरिक अवस्था
* महोत्सव का कार्यक्रम

आत्म परिचय

देवात्मा विशेष अंक में परम पूजनीय भगवान देवात्मा द्वारा लिखित लेख दिए गए हैं। उनका आर्विभाव क्यों अद्वितीय है? उन्होंने अद्वितीय लक्ष्य धारण करके हम मनुष्यात्माओं की नीच प्रकृति के कारण क्या-क्या असहाय यातनाएं सही हैं। अबोधी, अनघड़ मनुष्यों की अबोधता से कैसे तड़पते रहे हैं, उसका अनुमान मनुष्य प्रकृति रखकर हम नहीं लगा सकते। जिन मनुष्यों में कुछ किसी विषय में अधिक बोध होता है, उसके विरुद्ध क्रिया से उसे जो दुःख और कष्ट पहुंचता है, उसका अनुमान भी उस बोध से शून्य जन नहीं लगा सकते। देवात्मा के देव बोधों पर जब चोट लगती थी, जो लगनी मनुष्य प्रकृति के द्वारा अश्वम्भावी थी, उसका प्रभाव उनके कोमल हृदय पर उसी प्रकार होता था, जैसे कांच पर पत्थर मारने से वह चकनाचूर हो जाता है। विरोधियों की विरोधता तो थी ही परन्तु सेवक गण ही नहीं कर्मचारियों की अबोधता भी उनके देव हृदय को चकनाचूर कर देती थी।

इस 'आत्म परिचय' में से कुछ लेख जो यहां प्रस्तुत कर रहे हैं, उससे हम उनके दुःख का कुछ परिचय पा सकते हैं, अनुमान नहीं लगा सकते।

साधारण जन यह सोच सकते हैं कि देवात्मा ने अपनी महिमा अपने देव बोधों के विषय में स्वयं ही लिख दिया। यह सोच मनुष्य प्रकृति की हो सकती है, परन्तु सोचने वाली बात यह है कि यदि देवात्मा अपने देवरूप, अपने देव बोधों, अपनी विशेषताओं के विषय में न लिखते तो हम तो उसका अनुमान तक नहीं लगा सकते थे। अब बेशक हम देवरूप को नहीं समझ सके, परन्तु आंशिक मानसिक ज्ञान पढ़ने से होता है।

परम पूजनीय भगवान देवात्मा ने अपने इन लेखों के विषय में स्वयं लिखा है :-

"इससे पहले मैंने "आत्म परिचय" शीर्षक कितने ही लेख जो देव समाज के हिन्दी पत्र में, उसके विशेष पाठकों के लिए प्रकाशित किए थे, उन्हीं को अब एकत्र करके इस पुस्तक में छापता हूं। यह पुस्तक भी केवल देव समाज के अधिकारी जनों के फायदे के लिए छापी जाती है, साधारण अमधिकारी जनों के लिए नहीं। आशा है, कि यह अधिकारी पाठकों के आत्माओं के लिए नाना प्रकार से लाभदायक प्रमाणित होगी"।

देव आश्रम लाहौर, 15 दिसम्बर, 1907

स.न.अ.

सत्यानन्द अग्निहोत्री

धर्म जीवन

खण्ड 31 अंक 12
दिसम्बर – 2018
वार्षिक मूल्य 50 रुपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

दुनिया की वर्तमान अवस्था में मेरा आविर्भाव – मेरा विशेष जीवन और संग्राम

(माघ १९६३ वि०)

मुझ में देवकोष सम्बन्धी शक्तियों के भिन्न स्वसन्मान का सात्विक भाव भी बहुत प्रबल रूप में प्रगट हुआ है। स्वसम्मान भाव क्या? अपने सन्मान का भाव। अपने आत्मा की इज्जत का भाव। यह भाव सात्विक भाव है, और मान और प्रशंसा वासना से बिल्कुल अलग है। यह भाव जिस मनुष्य में वर्तमान होता है, वह किसी के सन्मुख अकारण घृणित होना नहीं चाहता। वह नहीं चाहता, कि मैं किसी के सम्बन्ध में कोई ऐसी अनुचित क्रिया करूं, कि जिससे कोई मेरी ऐसी क्रिया पर घृणा का प्रकाश करे, और मुझ से क्लेश पाकर मुझे घृणा-सूचक कोई बात कहे, वा मुझे ताड़ना दे, वा भर्त्सना करे। वह अपनी किसी दुष्क्रिया से किसी के सामने हेठा, वा जलील वा नीच जाहिर होना पसन्द नहीं करता। वह किसी के सम्बन्ध में कोई ओछी, कमीनी, नीच वा अपराधमूलक क्रिया करके झिड़की वा झाड़ खाना, अपमानित होना, तिरस्कृत किया जाना, घृणित वा जलील होना पसन्द नहीं करता, और इसीलिए माननीय पुरुष होता है।

मान और प्रशंसा वासना का जिस मनुष्य में अधिकार होता है, वह किसी से मान वा प्रशंसा पाने के लालच में जहां कभी 2 अपनी अवस्था के अनुसार कोई अच्छा काम भी करता है, वहां कई बुरे कामों के करने के लिए भी तैयार रहता हैं वह सदा औरों से प्रशंसा और मान का भूखा रहताा है, चाहे वह किसी तरह प्राप्त हो। वह सत् और असत् वा भले और बुरे का विवेक वा बोध नहीं रखता। और इसीलिए किसी सद्गुण के लिए उसके सद्गुण होने के विचार से अपने हृदय में उसका कोई समादर वा सन्मान अनुभव नहीं करता, और न किसी बुरी बात के लिए उसके बुरे होने के विचार से अपने भीतर कोई घृणा अनुभव करता है। ऐसा मनुष्य जब अपनी किसी बुरी क्रिया के लिए किसी के सन्मुख तिरस्कृत होता है, जब वह अपनी किसी बुरी क्रिया को बुरे रूप में देखकर शर्मिन्दा वा दुखिया नहीं होता, और यह इच्छा नहीं करता, कि आगे के लिए मैं इस दुष्क्रिया से उद्धार पाने का संग्राम करूंगा, और फिर उनके सन्मुख लज्जित और घृणित न बनूंगा, किन्तु इस के विरुद्ध वह अपने तिरस्कारकर्ता को ही शत्रु के रूप में देखता है, और उसी के प्रति घृणा अनुभव करके उससे फट कर दूर हो जाता है। मान और प्रशंसा वासना का दास

अपनी नीच से नीच क्रिया के लिए भी किसी के सन्मुख उचित रूप से घृणित होना नहीं चाहता। वह सदा प्रशंसा चाहता है, और इसीलिए जब उसे अपनी किसी दुष्क्रिया के लिए प्रशंसा के स्थान में घृणा मिलती है, तभी वह अपने अहं पर चोट खाकर जल उठता है, और जिसके सम्बन्ध में उसने कोई पाप वा अपराध किया हो, उल्टा उसी को घृणा की दृष्टि से देखता है, और उसी के प्रति दुश्चिन्ता करता है, और यदि प्रतिशोध का प्रबल भाव रखता हो, तो उससे परिचालित होकर उसे नाना प्रकार से हानि पहुंचाकर अपने इस नारकीय भाव की तृप्ति लाभ करता है।

आत्मसन्मान भावधारी पुरुष धन्य है। वह इस सात्विक भाव के वर्तमान होने से अपने नाना सम्बन्धों में जहां एक ओर कई प्रकार की नीच क्रियाओं से बचता और बच सकता है, वहां दूसरी ओर अपने कितने हि साधारण कर्तव्य कर्म भली-भांति पालन करने के योग्य बन जाता है। ऐसे मनुष्य से यदि दुर्बलता वश किसी के सम्बन्ध में कोई अपराध हो जाए, अथवा कोई पवित्र अंगीकार वा अन्य कर्तव्य कर्म्म पूरा न हो, तो वह अपनी किसी ऐसी क्रिया के लिए उस सम्बन्धी के सन्मुख आँख नहीं उठा सकता, अपने भीतर बड़ी लज्जा वा शर्म अनुभव करता है, और बार-2 आकांक्षा करता है, कि मुझे फिर इस प्रकार उसके सन्मुख लज्जित और घृणित न होना पड़े।

इस सात्विक भाव से ऊपर अहित विषयक घृणा और दुख बोध है, कि जो देव वा धर्मकोष का एक बहुत बड़ा अंग है। यह पूर्ण बोध जिस आत्मा में वर्तमान हो, वह किसी के सम्बन्ध में केवल उसके सन्मुख अपमानित वा घृणित, वा तिस्कृत होने के भय से हि किसी अपराध, वा पाप, वा नीच आचरण से बचना नहीं चाहता, किन्तु प्रत्येक नीच क्रिया के लिए हि, चाहे वह अपनी हो, वा किसी और की, अपने हृदय में बहुत गहरी घृणा रखता है। इसलिए औरों की दृष्टि से छिपकर अपने हृदय में भी किसी के सम्बन्ध में कोई अनुचित चिन्ता तक करना नहीं चाहता। और यदि प्रारम्भ की अवस्था में दुर्बलता वश उसमें कभी कोई ऐसी चिन्ता उत्पन्न हो, तो उसके लिए अपने भीतर बहुत दुखदाई और अशान्ति जनक गहरी जलन अनुभव करता है। और जिस तरह आग से कोई अपनी अंगुली जलाकर फिर उसे दग्ध करना नहीं चाहता, उसी तरह यह भी हर एक ऐसी जलन के अनन्तर उससे बचने के लिए अधिक घृणा का बल लाभ करता है। और एक दिन यथेष्ट घृणाबल के प्राप्त हो जाने पर फिर ऐसी बुरी चिन्ता के विकार से भी पूर्णत: मुक्त हो जाता है।

मुझ में आत्म-सम्मान विषयक पूर्ण सात्विक भाव के भिन्न अहित विषयक पूर्ण विराग भी वर्तमान है।

इन दोनों प्रकार की शक्तियों में से धर्म वा देवकोष सम्बन्धी शक्ति तो कहीं रही, पहली सात्विक शक्ति भी लाखों मनुष्यों में पाई नहीं जाती। मेरा भी जिन आत्माओं से पारिवारिक वा सामाजिक सम्बन्ध है, उनमें भी प्राय: यह सात्विक शक्ति वर्तमान नहीं है।

फिर जिनमें यह दोनों शक्तियां न हों, उनमें से जिन-2 में निम्नलिखित लालचों वा भय में से यथा

1) धन का प्रबल लालच
2) मान प्रशंसा का प्रबल लालच

3) परलोक सम्बन्धी किसी सच्चे वा कल्पित सुख का प्रबल लालच

4) यहां पर वा परलोक में किसी सच्चे वा कल्पित दंड वा दुख का अधिक भय,

एक वा दूसरा वर्तमान हो, वह भी किसी-2 अंश में कर्तव्य भंग, वा अन्य एक वा दूसरी दुष्क्रिया से बचे रहने के लिए यत्न करते हैं, और इसीलिए बचे भी रहते है। परन्तु जिन में यह भी अवर्तमान हों, वह पूरे स्वेच्छाचारी होते हैं; और जो कुछ उनका नीच हृदय चाहता है, वही करते हैं और उसमें किसी प्रकार की कोई रोक अनुभव नहीं करते। ऐसे लोग पूरे गुंडे और अधम आत्मा होते हैं।

धन और मान प्रशंसा का लालच लाखों मनुष्यों में पाया जाता है। इसीलिए किसी स्टेट (राज्य) को जिन सिविल और मिलेटरी के लिए हज़ारों और लाखों आदमियों को नौकर रखने की जरूरत होती है, वह प्राप्त होते हैं, जिन के और विविध कारखानों और अन्य कामों को चलाने के लिए नौकर मिलते हैं, नाना प्रकार के व्यवसायी (पेशेवाले) मिलते हैं, और प्रत्येक स्टेट और सोसायटी आदि का साधारण काम चलता है।

मेरे पास जो लोग रहते हैं, अथवा जिन से मुझे बरतना पड़ता है, उनमें यदि एक ओर उपरोक्त सात्विक और धर्म शक्तियां वर्तमान न हों, अथवा मैं उन्हें उनके अपराधों के लिए आर्थिक वा कोई शारीरिक दण्ड देना पसन्द न करूं, तो फिर अनुमान किया जा सकता है, कि ऐसे सम्बन्धियों से सम्बन्ध रखकर मेरे लिए प्राय: प्रति दिन कितनी मुसीबत खड़ी रह सकती है! मेरे लिए क्या क्या कुछ आघात पाना, और क्लेश सहना, और दुख उठाना आवश्यक हो जाता है!! इसीलिए मैने अपना जीवन व्रत ग्रहण करने के बाद में आज तक २४ साल में अपने पारिवारिक, सामाजिक और स्वदेशी जनों के नाना प्रकार के अपराधों और अत्याचारों से जितना कुछ और जितने प्रकार का दुख और कलेश पाया है, और उनमें मुझे जितने प्रकार की हानियां पहुंची हैं, वह जैसे अवर्णनीय हैं, वैसे हि वह उन कठोर हृदयों के अनुमानों से भी बाहर हैं, कि जो उनके कर्ता हैं, अथवा जिन्हें उनके जानने और अनुभव करने के लिए न कोई अवसर प्राप्त है और, न आवश्यकता है। तो भी यह जानकर, कि मनुष्यों की वर्तमान अवस्था के अनुसार उनका उत्पन्न होना, और मुझे उन्हें अपने अद्वितीय जीवनव्रत को सिद्धि के लिए सहना आवश्यक है, मैंने उन्हें सहा है, और जब तक नेचर के अपने इन्तज़ाम से उद्धार न होगा, तब तक सहता रहूंगा।

हरबर्ट स्पेन्सर अपनी ''एडयूकेशन'' नामक पुस्तक में एक जगह इस प्रकार लिखते हैं :-

"If by any system of culture an ideal human being could be produced, is it not doubtful whether he would be fit for the world as it now is?

May we not, on the contrary, suspect that his too keen sense of rectitude and too elevated standard of conduct, would make life intolerable or even impossible?"

भावार्थ - "यदि शिक्षा की किसी विधि के द्वारा एक आदर्श मनुष्य उत्पन्न किया जा सके, तो क्या यह सन्देह नहीं हो सकता, कि इस काल

में दुनिया जैसी है, उसके साथ वह किसी प्रकार मेल की अवस्था में भी रह सकेगा या नहीं? इसके विरुद्ध क्या हम यह शंका नहीं कर सकते, कि उसमें ठीकपन का जो अति गहरा भाव और चरित्र विषयक अति उच्च पैमाना वर्तमान होगा, उससे उनका जीवन उसके लिए अत्यन्त दुखदाई अथवा असम्भव हो जायेगा?"

हरबर्ट स्पैन्सर विख़्यात विकाशवादी थे। वह विकाश के इन दो तत्वों से अवगत थे - (1) परम्परा-प्राप्त जीवन सामग्री(inheritance) (2) आवृत्तकारी सम्बन्धी(Environment)। "शिक्षा" नामक पुस्तक में उन्होंने मनुष्य के लिए उच्च शिक्षा विषयक विधि का वर्णन करते-2 अचानक अपने भीतर यह प्रश्न उठता हुआ देखा - क्या? यह, कि यदि कोई मनुष्य साधारण मनुष्यों की तुलना में इतनी उच्च शक्तियों की सामग्री लेकन पैदा हो, कि जिससे वह शिक्षा की उच्च विधि में से गुजरकर एक आदर्श जीवनधारी मनुष्य बन जाये, तो क्या दुनिया के साधारण मनुष्य की जो वर्तमान अवस्था है, उनमें रहकर वह उनके साथ किस प्रकार मेल खा सकेगा? इस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने लिखा है, कि उन्हें सन्देह है, कि ऐसी दुनिया में ऐसे आदर्श मनुष्य का जीवन उसके लिए अतिशय दुखदाई अथवा असम्भव हो जाएगा।

स्पेन्सर को उपरोक्त प्रश्न का उपरोक्त उत्तर देते समय क्या पता था, कि उन्हीं के समय में एक ऐसा आदर्शपुरुष नेचर ने प्रगट किया है, कि जिसके जीवन के सम्बन्ध में यह बात "सन्देह" से साथ नहीं किन्तु निश्चय रूप में कही जा सकती है। वह अपने इसी आदर्श जीवन के कारण जिस प्रकार के महा भयानक दुखों और उत्पीड़नों में से गुजरा है, वह अकथनीय हैं। उसे जहां अपने इस अद्वितीय जीवन, और जीवन सम्बन्धी अद्वितीय व्रत के विचार से लोगों में जो 2 सर्वोच्च सन्मान और आकर्षण पाना चाहिए था, वह प्राप्त नहीं हुआ, वहां उसके विरुद्ध वह अतिशय घृणा और उत्पीड़न का पात्र समझा गया। इस स्वभाव-गत महा भेद के कारण लोग उसकी ओर आकृष्ट होने के स्थान में उससे परे भागने और परे रहने में आराम अनुभव करते रहे हैं। जैसे कबूतर और कव्वे दोनों ही पक्षी जाति में से हो कर भी मिलकर नहीं रहते, किन्तु सर्वदा दूर-2 रहते हैं, वैसे हि नीच जावनधारी जन आत्मा होकर भी इस सर्वोच्च जीवनधारी देवात्मा से मेल नहीं कर सकते, और उससे परे 2 रहते हैं। इसीलिए उसे आज तक इस पृथ्वी में एक भी ऐसा संबन्धी नहीं मिला, कि जिसके साथ वह सब प्रकार से मेल की अवस्था में रह सका हो। परन्तु उसने विश्व के एक श्रेष्ठ विभाग का सर्वोच्च आविर्भाव और अंग होकर उसके प्रत्येक विभाग में उसके द्वारा, जो कुछ और जहां तक, उच्च विकाश हो सकता है, उसके लाने, और जहां तक उसकी विनाश से रक्षा हो सकती है, उसकी विनाश की रक्षा करने के लिए जो अद्वितीय व्रत ग्रहण किया था, उसकी पूर्ति के लिए उन सब घोर दु:खों को सहा है, और नाना प्रकार की हानियां उठाई हैं, कि जिनके सहने और उठाने के बिना उसका यह महाव्रत पूरा नहीं हो सकता था। और आगे भी जब तक इस अद्वितीय संग्राम में उसके लिए ऐसा करना आवश्यक हो, तब तक यह मिसरा पढ़कर

"सरे तसलीम ख़म है, जो मिज़ाजे यार में आए" तैयार है।

मेरा आविर्भाव और मेरा जीवनव्रत – मेरा त्याग और संग्राम – क्यों?

(चैत्र १९६३ वि०)

विश्व के विभाग के किसी जीवित अस्तित्व या अजीवित पदार्थ के सम्बन्ध में अनुचित हानि विषयक नाना बोधों के होने से जब मैं देखता हूं, कि मेरा कोई संबन्धी किसी जीवित अस्तित्व या अजीवित पदार्थ के सम्बन्ध में किसी प्रकार की कोई अयथा क्रिया करता है, तब मैं उस अस्तित्व वा पदार्थ के साथ जुड़ा होने के कारण स्वभावत: उस की ऐसी क्रिया से अपने हृदय में आधात लाभ करता हूं। मेरी पत्नी, या मेरा कोई बच्चा, या उसकी स्त्री वा अन्य पारिवारिक , वा सेवक, वा श्रद्धालु जन, किसी अन्य जन, वा पशु, वा वृक्ष, वा पौदे, वा पदार्थ, यथा - घर, दीवार, फर्श, मेज़, चौकी, किताब, काग़ज, कलम, पेन्सिल, दवात, चाकू, कैंची, बरतन, कपड़ा, फल, फूल आदि किसी के सम्बन्ध में कोई अनुचित क्रिया करे, तो उसके देखने वा पता मिलने पर मुझ तक उसकी उस क्रिया का आघात पहुंचता है, और मैं उससे क्लेश पाता हूं, इसी प्रकार कोई अन्य जन, वा जीव मेरे उपरोक्त नाना प्रकार के सम्बन्धियों के संबंध में यदि कोई अनुचित क्रिया करे, तो उसका मेरे हृदय तक आघात पहुंचता है। यह नाना प्रकार के आघात मेरे उच्च बोधों के कारण मुझ तक पहुंचते हैं, यथा यदि मैं देखता हूं, कि अमुक चीज़ किसी अमुक अनुचित स्थान में रखी है, तो मुझे यह दृश्य चुभता है। परन्तु जिसने उसे वहां रखा है, अथवा और कितने हि लोग जो उसे वहां इस प्रकार रखा हुआ देखते हैं, उन्हें उसके लिए कोई क्लेश मालूम नहीं होता। यदि मैं देखता हूं, कि किसी गमले को पानी नहीं मिला, और उसका पौदा सूख रहा है, तो इसे मुझे तकलीफ होती है, परन्तु जिसने पानी नहीं दिया, उसे बताने पर भी अपनी इस क्रिया के लिए कोई क्लेश नहीं होता, और अन्य कितने ही जन जो उस सूखे पौदे के पास से आखें खोले हुए, गुजरते रहते है, उन्हें भी या तो उसकी यह शोचनीय अवस्था दिखाई नहीं देती, या यदि दिखाई देती है, तो उससे उन्हे कोई क्लेश नहीं मिलता। यदि मैं देखता हूं, कि मेरा एक पारिवारिक जन दूसरे पारिवारिक जन के प्रति, अथवा कोई सेवक किसी सेवक के प्रति अपनी किसी क्रिया से उचित सन्मान प्रदर्शन नहीं करता, वा कोई और उचित व्यवहार नहीं करता, तो उसका आघात मुझ तक पहुंचता है, परन्तु अनेक बार जिसके सम्बन्ध में ऐसा अनुचित बर्ताव हो रहा है, अथवा जो ऐसा अनुचित बर्ताव कर रहा है, उनमें से किसी को कुछ अनुभव नहीं होता। क्यों? इसलिए, कि उनके आत्मा उन बोधों से शून्य हैं, कि जो मुझ में वर्तमान हैं और जिनके वर्तमान होने से ही मैं उनके साथ जुड़कर इस प्रकार के नाना आघात पाता हूं। ऐसे बोधों के यह आघात ही मुझे हानि - प्राप्त अस्तित्व की रक्षा और सहाय करने और हानिकारक जन की उचित रूप से खबर लेने, वा उसे उसकी अपनी बुरी क्रिया के दिखाने के निमित्त अपनी ज्योति के पहुंचाने, वा उसका ऐसी क्रिया के उद्धार करने के लिए उसमें आवश्यक उच्च बोध के उत्पन्न करने के लिए संग्राम करने, वा उस के उसी प्रकार बार - 2 हानिकारक बनने पर उसे उचित दण्ड देने के लिए, तैयार करते हैं। जिन आत्माओं में यह उच्च बोध वर्तमान नहीं है, उन्हें उपरोक्त प्रकार के न कोई आघात पहुंचते हैं,

और न वह उनके विषय में कोई उच्चगति ग्रहण करके किसी की रक्षा वा सहाय करते हैं, और न किसी का उनकी किसी ऐसी नीचगति से उद्धार के लिए कोई यत्न वा संग्राम करते हैं, और न ऐसे संग्राम से विश्व में कोई हितकर परिवर्तन उत्पन्न करते हैं। तब विश्व में इस प्रकार के हितकर परिवर्तन के लाने के लिए जैसे मेरे आविर्भाव की विशेषता है, वैसे ही मेरे लिए अपने इस विशेष आविर्भाव के विशेष लक्ष्य वा व्रत के पूरा करने के लिए अपने विविध संबन्धियों की नाना प्रकार की नीच गतियों के द्वारा नाना प्रकार के आघात पाना, ऐसे आघातों से दुखी होना, अपने शारीरिक स्वास्थ्य की हानि उठाना, उनके लिए अपने शारीरिक, मानसिक और हार्दिक बल को खर्च करना, अथवा एक शब्द में उनके उद्धार और उच्च विकाश के लिए कुरबान होना और आत्म-समर्पण करना लाजमी है। मुझे प्रतिदिन ही अपने इस महाव्रत के साधन के लिए इस महायज्ञ की पवित्र अग्नि में अपनी शक्तियों की आवश्यक आहुतियां देनी पड़ती हैं। प्राय: पच्चीस वर्ष से मैं इस अद्वितीय यज्ञ के अद्वितीय साधन में लगा हुआ हूं। विश्व ने हि अपने उच्च विकाशक्रम में मुझे इस अद्वितीय देवयज्ञ के पूर्ण करने के निमित्त आविर्भूत किया है। उसी ने मेरे आत्मा की गठन को पूर्ण करके वह देवशक्तियां दी हैं, कि जो इस देवयज्ञ के लिए आवश्यक थी। क्या मेरे देवरूप के आविर्भाव की यह देवलीला किसी को दिखाई देती है? क्या इस प्रत्यक्ष लीला में विकाश का अटल परन्तु प्रत्यक्ष नियम अपने जिस अद्वितीय सौन्दर्य को प्रकाश कर रहा है, उसकी अतिशय मनोहर झलक किसी के चित्त को आकृष्ट करती है? क्या इस अद्वितीय यज्ञ के साधन में मेरा आत्म-समर्पण और मेरा घोर संग्राम किसी की दृष्टि में कुछ मूल्यवान् मालूम होता है? क्या मेरे इस सचमुच के प्राय: चौथाई शताब्दी के महात्याग से आज तक जो फल प्रगट हुए हैं-नर और नारी आत्माओं के भीतर जो परिवर्तन आया है, परिवारों में जो 2 शुभ आया है, उनके और उनकी सन्तान के लिए जिस 2 प्रकार की इन्स्टीटयूशनें खुल चुकी हैं, जिस 2 प्रकार की पुस्तकें रची गई हैं, लेख लिखे गए हैं, सत्यधर्म विषयक सत्य प्रकाशित हुए हैं, आत्मा के जीवन के विकाश वा विनाश के सम्बन्ध में तत्व प्रगट हुए हैं, धर्मशाला और धर्माचार विषयक शिक्षा प्रचलित हुई है, धर्म विषयक अज्ञान और कुसंस्कार नष्ट हुआ है, कल्पना-मूलक मिथ्या मतों और विज्ञान-मूलक सत्यमत का भेद खुला है, पाप गया है और सत्य शुभ आया है -वह सब मेरे अद्वितीय व्रत और उसके पूर्ण करने में मेरे अद्वितीय त्याग की महानता को डंके की चोट में स्थापन नहीं करता? अवश्य करता है। क्या इस देश वा पृथ्वी के किसी अन्य देश में इस यज्ञ का कोई अन्य दृष्टांत मिल सकता है? क्या मेरा यज्ञ और व्रत सचमुच अद्वितीय नहीं? तब मेरे इस परम हितकर यज्ञ, और अद्वितीय व्रत की महिमा और उसके सौन्दर्य के देखने के योग्य होना, और उसके कार्य में भागी बनने के परम सौभाग्य को अनुभव करना, मनुष्य का कितना बड़ा अधिकार! इस अद्वितीय यश के अग्निकुंड में अपने धन और शारीरिक और मानसिक और यथा संभव हार्दिक बल की आहुतियां देना, और उसकी अग्नि को अधिक से अधिक प्रज्वलित करना इस देश के लोगों के लिए कितनी श्रेष्ठ आकांक्षा!! यह महत् अकांक्षा जितने आत्माओं में अधिक से अधिक जागेगी, और वह उसके लिए खुशी 2 भागकर अपने आपको समर्पण करेंगे, उतना ही विश्व की ओर से मेरे अस्तित्व के आविर्भाव का उद्देश्य सिद्ध होगा, और इस देश और इस पृथ्वी का वह कल्याण साधन होगा, जो

आज तक कभी नहीं हुआ। मेरा अस्तित्व और मेरा जीवन-व्रत, मेरा त्याग और मेरा संग्राम, विश्व के जिस विकाशकारी अटल नियम के द्वारा प्रगट हुआ है, वह जैसी उसकी गठन से प्रत्येक विभाग में उच्च परिवर्तन लाने के लिए जरूरी था, वैसे ही वह उस के अटल नियम के अनुसार (अन्धकार-ग्रस्त और नीचगति -परायण हजारों आत्माओं के विराधी बनने पर भी) अब तक जिस 2 प्रकार से फलीभूत हुआ है वह सब अति आश्चर्य और अलौकिक लीला है। आगे भी वह उसी अटल नियम के द्वारा इससे भी बढ़कर आश्चर्य और अलौकिक रूप से फलीभूत होगा।

उच्चबोध-जनित मेरी बेचैनी वा व्याकुलता

(आषाढ़ १९६४ वि०)

राम प्यास से व्याकुल हो रहा है। क्यों? इसलिए कि उसमें प्यास का बोध वर्तमान है। प्यास के लगने से मनुष्य पानी पीता है, और पानी उसके शरीर के रक्त को पतला और प्रवाहित रखने के लिए जरूरी है। अब यदि राम को इधर बहुत प्यास लगी हो, और उधर उसे पानी न मिले अथवा समय पर उसके मिलने की संभावना न हो, तो राम के लिए यह प्यास क्लेशदायक हो जायगी। और वह प्यास जितनी अधिक प्रबल होगी, उतना ही उसके लिए अधिक क्लेश-दायक बन कर उसे व्याकुल और बेचैन करेगी। परन्तु इधर जैसे प्यासा राम प्यास की अत्यंत वेदना से तड़पता दिखाई देता है, उधर श्याम, जिसे प्यास का अनुभव नहीं, खुश और शान्त नज़र आता है।

मुझ में विश्व के प्रत्येक जगत् के सम्बन्ध में नाना प्रकार के शुभमेल-उत्पादक बोधों के वर्तमान होने से जिस किसी सम्बन्ध में किसी कारण से कोई बुराई उत्पन्न होती है, अथवा भलाई आने से अनुचित देर होती है, उसी सम्बन्ध में मुझे आघात और क्लेश पहुंचता है और मैं अपने बोध की प्रबलता के कारण ऐसे एक 2 आघात के क्लेश से बेचैन होकर तड़पने लगता हूं। परन्तु जिनमें यह बोध वर्तमान नहीं है, वह केवल यही नहीं, कि ऐसी किसी घटना से दुखी या बेचैन नहीं होते, किन्तु मुझे बेकरार देख कर अपनी नीच प्रकृति की नीच प्रेरणा के अनुसार मुझे अनादर वा घृणा की दृष्टि से देखते हैं। उनमें जिस संबंध में जिस बुराई का बोध नहीं, उसके आने वा न आने की सम्भावना के होने पर कोई आघात नहीं लगता, और कोई क्लेश नहीं पहुंचता। इसीलिए कितने ही लोग क्या मेरे सम्बन्ध में और क्या विश्व के अन्य अस्तित्वों के संबंध में नाना प्रकार की बुराईयां करके, केवल यही नहीं, कि कुछ दुखी नहीं होते, किन्तु बहुत शान्त और प्रसन्न रहते हैं। पत्थर को जैसे जोंक नहीं लगती, वैसे ही इन अबोधी जनों को किसी के सम्बन्ध में अपने किसी अनुचित आचरण के लिए कोई दुख वा क्लेश नहीं होता, और न उसके लिए कोई घृणा उत्पन्न होती है। इसलिए उनके इस प्रकार के नाना पापों और अपराधों का क्रम बराबर जारी रहता है, और कोई कल्पित ईश्वर वा देवता, वा केवल मंत्रदाता गुरू, उन्हें ऐसे पापों से मोक्ष नहीं दे सकता। जब कोई जन, अपनी अबोधता वा नीचता के कारण मेरे सम्बन्ध में

कोई काम ठीक समय में और ठीक तौर से पूरा नहीं करता, अथवा उसमें असावधानता वा बेपरवाही प्रगट करता है, और मुझे यह प्रतीत होता है, कि उसके आचरण से मेरे अमुक विश्वगत संबंध में शुभ के स्थान में अशुभ उत्पन्न होगा, वा होने वाला है, तब मैं ऐसी प्रत्येक घटना से अपने अहित विषयक नाना प्रबल बोधों के कारण झट बिलबिला उठता हूं। और जैसे किसी के पके हुए फोड़े पर अगर कोई ठेस लगा दे, तो उस के आघात और दर्द से वह तड़प उठता है, वैसा हि मेरा हाल होता है।

जैसे भूख और प्यास का लगना शरीर की रक्षा के लिए आवश्यक है, और जिसे भूख वा प्यास न लगती हो, और आहार और पानी के समय पर न मिलने, अथवा बिल्कुल न मिलने से, कोई बेचैनी या बेकरारी उत्पन्न न होती हो, उसके शरीर का नाश हो जाना अवश्यभावी है, वैसे हि जिस आत्मा के भीतर विश्व-गत किसी सम्बन्धी के सम्बन्ध में अपनी किसी नीचगति के लिए कोई आघात वा क्लेश न पहुंचता हो, और किसी अशुभ या अहित के उत्पन्न होने से, उसके हृदय पर कोई चोट न लगती हो, और कभी बेचैन वा बेकरार न होता हो, उसके जीने की आशा नहीं-हां, उसका विनाश हो जाना लाजमी है। हित-अहित, सत्य और असत्य विषयक नाना बोधों को प्राप्त होकर, और विश्व के प्रत्येक जगत के साथ सत्य और शुभ मूलक मेल के द्वारा अपने आत्मा के सर्व्वाङ्ग जीवन का विकाशार्थी बन कर, मेरे लिए अपने इस दुनिया के अबोधी सम्बन्धियों से जैसे विविध प्रकार के आघात और क्लेश पाते रहना आवश्यक है, वैसे ही इन आघातों और दुखों से तड़पना और बेचैन होना भी लाजमी है। परन्तु हाय! इस महातत्व के अबोधी जन, कितनी ही अवस्थाओं में मुझे अपनी अबोधता या नीचगति के कारण कोई आघात पहुंचाकर, वा दुख देकर, वा बेचैन और बेकरार होता या तड़पता देखकर, केवल यही नहीं, कि इसमें मुझ उच्च बोधों के भंडार की कोई महिमा, और अपने एक वा दूसरे अपराध, वा पाप के लिए कोई शोक वा क्लेश या घृणा अनुभव करके खुद बेहतर नहीं बनते, वरन् उस पाप के भिन्न उलटा मेरे सम्बन्ध में एक वा दूसरा दोषारोपण वा एक वा दूसरी दुश्चिन्ता करके, अपने हृदय को और भी अधिक कलुषित, नीच, कठोर और विकारयुक्त बना लेते है!! ओह! धर्ममार्ग कितना कठिन! धर्मजीवन की प्राप्ति कितनी मुश्किल!! धर्मदाता सच्चे गुरु के लिए किसी धर्माकांक्षी पूर्ण श्रद्धावान् और अनुगत शिष्य का मिलना कैसा दुर्लभ!!!

सूचना

धर्म जीवन सम्बंधी हर प्रकार की जानकारी के लिए, चंदा आदि भेजने, कोई मैटर आदि भेजने के लिए साथ लिखे पते पर सम्पर्क करें या लिखें। :- श्रीमान बलदेव सिंह जी

House No. 3154, Sector 21-D,
Chandigarh - 160 022
Phone : 0172 - 4638229,
2716914

मेरे सम्बन्धियों की वर्तमान अवस्था और मैं

(कार्तिक, १९६० विक्रमी)

जिन सम्बन्धियों से अकसर मेरा वास्ता पड़ता है, उनकी वर्तमान अवस्था का मैं कुछ संक्षेप से वर्णन करता हूं।

कठोरता

मैं अक्सर कुछ न कुछ बीमार रहता हूं। परन्तु साधारण बीमारी की अवस्था में भी जिस 2 सम्बन्ध में जो कुछ चिन्ता या कार्य वा साधन करना मेरे लिए संभव है, उसे पूरा करता हूं। ऐसी सख़्त बिमारी के भिन्न, कि जिसमें शरीर पर मेरा कुछ भी जोर न रहे, काम करने से बन्द नहीं होता - मृत्यु के बिस्तर पर भी मेरी यह इच्छा होती है, कि जहां तक मेरा वश हो, किसी के भले के लिए कुछ न कुछ कर जाऊं। जब तक कोई असह्य यन्त्रणा न हो, और मैं बेचैन होकर तड़प न रहा हूं, तब तक प्राय: मेरे सम्बन्धी मुझे बीमार नहीं समझते। परन्तु जब मैं रोग वा पीड़ा गस्त भी होता हूं, और उसका पता भी औरों को होता है, तब भी मैं क्या देखता हूं, कि एक दो के भिन्न उसकी किसी को परवाह नहीं होती। मैं आप भी अपने आत्मसन्मान के भाव के अनुसार हर एक को अपना दुख - दर्द नहीं बतलाता। मैं समझता हूं, कि किसी चिकित्सक वा ऐसे जन के भिन्न, कि जो मेरी बीमारी का ब्योरा जानकर मेरे लिए कुछ हितकर हो सकता हो मुझे किसी और पर अपने हाल का ज़ाहिर करना उचित नहीं। इसलिए मैं साधारणत: किसी के पूछने पर अपनी शारीरिक अवस्था के विषय में एक दो ऐसे शब्द कहकर "सेहत खराब है" "ज्यादा खराब है" "मामूली है" "करीबन मामूली है" चुप हो जाता हूं।

कई बार ऐसा होता है, कि बाहर से जो सेवक इधर उधर से सुनकर मेरी बीमारी के विषय में सहानुभूति की चिट्ठियां लिखते हैं, वह बहुत हास्यप्रद और अनाप शनाप होती हैं। ऐसा होता है, कि जब मुझे बुख़ार नहीं होता, तब बाहर के कई सेवक लिखते हैं, कि हमें बहुत दुख है, कि आप बुखार से बीमार हैं। कभी ऐसा होता है, कि मैं इधर कई रोगों से सचमुच बहुत तकलीफ पा रहा हूं, उधर ऐसी चिट्ठियां मिलती हैं, कि जिन में लिखा होता है, कि खुशी की बात है कि अब आप की सेहत अच्छी है। इन चिट्ठी लिखनेवालों को मेरी बीमारियों का कोई ठीक पता नहीं मिलता और इसीलिए उनके लेखों में इतनी गड़बड़ होती है।

एक बार एक बहुत पुराने सेवक ने (शायद भूलकर) मुझ से मेरी शारीरिक पीड़ा का हाल पूछा। मैंने भी भूलकर अपना कुछ हाल बताना आरम्भ कर दिया। अभी मुझे अपना हाल बताते शायद आधा मिनट न हुआ होगा, कि उसने झट से विषय से अपना ध्यान हटाकर किसी और विषय में कुछ कहना वा पूछना शुरू कर दिया। उस समय उसकी इस महा भयानक नीचता की करतूत से मेरे दिल में एक बर्छी सी घुस गई। मैं बहुत दु:खी हुआ, बहुत झुझंलाया, और धर्मगत सम्बन्धियों की इस दुर्दशा को देखकर बहुत बेचैन हुआ। परन्तु जिसने यह लीला दिखलाई, वह? वह कुछ देर बाद फिर ज्यों का त्यों दिखाई दिया।

एक बार (इस बात को अभी शायद दो वर्ष भी न हुए हों) मैं बहुत सख्त बीमार था। मेरी पीड़ा

असाधारण थी। मैं निहायत कमज़ोर और नाजुक हालत में था। मैं यद्यपि उस समय किसी से यों ही बात-चीत करने के योग्य न था, तो भी एक पुराना सेवक मेरी आज्ञा के बिना मरे कमरे में घुस आया, और मेरे पास आ बैठा। मैंने बड़ी कठिनता और दिक्कत से धीरे-2 कुछ शब्द अपने मुख से निकाले और कहा कि मैं तुम से कुछ बातचीत करने के योग्य नहीं, तुम्हारा यहां बैठना मुझे दु:खी करता है। इस पर भी वह उठना नहीं चाहता था, और बहुत मुश्किल से बाहर गया।

एक 2 बार मेरा कोई धर्म सम्बन्धी जब मुझ से मिलने आता है, तब यद्यपि मेरा शरीर साथ नहीं देता, फिर भी मैं उससे यह समझ कर मिलता हूं, कि शायद में उसके लिए कुछ हितकर हो सकूं। एक बार मैं उसे यह भी बता देता हूं, कि अधिक बातचीत से मेरे सिर की तकलीफ बढ़ जाया करती है, परन्तु मेरा यह कहना उसके हृदय पर कोई असर नहीं रखता। वह अपनी बातचीत आवश्यकता से भी बढ़कर जारी रखता है, और अपने बर्ताव से यह प्रकाश करता है, कि मेरे दु:ख के बढ़ने की उसे कोई परवाह नहीं हैं।

"शिष्टाचार" नामक पुस्तक में मैंने रोगी और उससे मिलने जुलने और शुश्रूषा के सम्बन्ध में कुछ बड़े और आवश्यक नियम दिए है। परन्तु हाय! वह शुभ नियम किस काम के, जब तक उनके ग्रहण करने के लिए किसी का हृदय तैयार न हो!! मेरी अधिक बीमारी में एक एक बार मेरे कमरे में इतने लोग घुस जाते हैं, कि जिन के लिए काफी जगह भी नहीं होती। कई उनमें से केवल दिखलावे के लिए आते हैं, जिस से कोई यह न कहे, कि ऐसी पीड़ा के समय में भी यह उनके पास न गया। और यह सब आकर करते क्या हैं? कोई भलाई करते हैं? कोई नहीं। दवा आदि वह कुछ नहीं जानते। सेवा और शुश्रूषा के नियम भी कुछ नहीं जानते, ओर न कुछ सीखना चाहते हैं। रोगी के पास हितकर होने के स्थान में उलटा उसके लिए कई प्रकार से हानिकारक होते हैं। उसके कमरे की हवा को गन्दी और खराब करते हैं और उसके विश्राम में बाधा डालते हैं।

अपमान अर्थात् बेइज्जती

सात्विक और धर्मगत श्रद्धा के उत्पन्न होने से जिस पवित्र सन्मान का भाव उदय होता है, और उसके उदय होने पर सच्चे श्रद्धालु के हृदय से जिस प्रकार का सच्चा सन्मान प्रदर्शन होता है, वह सन्मान मेरे धर्म सम्बन्धियों में प्राय: पाया नहीं जाता। यह डिपुटीकमिश्नर के अमले की तरह केवल झुककर सलाम करना (मत्था टेकना) जानते हैं। हृदय की पवित्र और उच्चगति-दायक श्रद्धा के द्वारा परिचालित होकर किसी प्रकार के सन्मान प्रदर्शन करने का भाव नहीं रखते। इसका फल यह होता है, कि ऐसी छोटी 2 बातों में भी, कि जिनमें एक खानदानी और भद्र (शरीफ) घर का शिष्टाचारी जन जहां अच्छा बर्ताव दिखा सकता है, वहां यह कोई सन्मान-मूलक अच्छा बर्ताव नही दिखा सकते। इन के भीतर वह सच्ची दीनता ही नहीं , कि जो एक अच्छे वैष्णव में अपने गुरू वा इष्टदेव के सम्बन्ध में पाई जाती है। इसीलिए एक ओर श्रद्धा-शून्य हृदय और दूसरी ओर एक भद्र वंश के शिष्टाचार की शिक्षा से खाली होकर यह छोटी 2 बातों में भी कोई उचित और हितकर सन्मान प्रदर्शन नहीं कर सकते। सामने खड़े हैं, और मैं उनसे कुछ कह रहा हूं, और वह किसी और तरफ को ताक रहे है। सभा में बैठे हैं, मैं कुछ उपदेश दे रहा हूं, और वह किसी और तरफ को ताक रहे हैं। मेरी विशेष 2

चीजों का जिन्हें मैं बहुत आदर करता हूं, बुरी तरह रखते हैं। मेरे जो पारिवारिक सम्बन्धी हैं, उन का भी कोई उचित सन्मान नहीं करते। और जब कि धर्मगत कोई सन्मान का भाव ही हृदय में नहीं है, इसलिए आपस में भी बड़े छोटे के विचार से कोई प्रशंसनीय सन्मान सूचक बर्ताव नहीं करते।

समय, प्रतिज्ञा, और कर्तव्य विषयक बोधों का न होना

मेरे निकट रहने वालों में प्रतिज्ञा विषयक बोध की बहुत कमी है। कितने ही काम जो उन्हें बतलाए जाते हैं, उन्हें वह बिल्कुल भुला देते हैं। समय और कर्तव्य विषयक बोधों के न होने से कई कामों को समय पर शुरू ही नहीं करते, और जहां तक होता है, उसे टालते रहते है, और जब उचित समय के चले जाने पर काम शुरू भी करते हैं, तो वह जल्दी में बिगड़ जाता है, और सन्तोषजनक नहीं होता। कई बार एक 2 काम बिल्कुल खराब होता हैं कई बार बिल्कुल नहीं होता। कई बार गलत होता है।

समय के संबंध में प्रतिज्ञा भंग करने और समय पर काम न करने, और काम को खराब करके विविध प्रकार की हानि पहुंचाने से इन्हें आप कोई क्लेश नहीं होता, यदि कुछ होता है, तो मेरी खफगी का। इसके भिन्न और कुछ नहीं।

कई बार ऐसा होता है, कि मैं जो कुछ आज्ञा देता हूं उसके विपरीत किया जाता है। यदि मैंने किसी को एक बात चिट्ठी में लिखने के लिए कही है, तो उसने उसके विरुद्ध कुछ और ही लिख दिया है। एक बार ऐसा हुआ , कि एक कर्मचारी ने मेरे नाम से बाहर के कार्यक्षेत्रों में लिख भेजा, कि अब अर्च्चन की विधि में यह बात न हुआ करे। मैं जब उन स्थानों में गया, तब इस नए परिवर्तन को देखकर आश्चर्य और क्लेश से भर गया। मैंने देखा, कि जो कुछ मैंने कभी नहीं कहा, कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा, वह मेरे जीते जी मेरे नाम से यहां कहा गया है।

एक बार मैं पटियाला जाने वाला था। एक कर्मचारी के साथ यह फैसला हुआ, कि जब मैं राजपुरे में छः बजे शाम के करीब गाड़ी से उतरूंगा, तब मुझे वहां खाना तैयार मिलेगा। परन्तु हुआ क्या? हुआ यह, कि साढ़े सात बजे तक भी मुझे खाना न मिला, और जो मिला, वह बहुत क्लेश के साथ, और जो कुछ खाया गया, वह बहुत दुःख और अशान्ति की अवस्था में।

पटियाले से चलने पर एक सेवक को कहा गया, कि हम सब पौने चार बजे की गाड़ी में हरिद्वार को रवाना होंगे। तीन बजे के करीब तक कुछ पराठे बना लिए जायें। तीन बजे पूछने पर मालूम हुआ, कि अभी तो अमुक आदमी आटा लेने के लिए बाजार गया है। फल? फल यह हुआ, कि जल्दी में वह पराठे बिल्कुल कच्चे तले गए, और चुपचाप साथ ले लिए गए। राजपुरे पहुंचकर जब मैं खाने के लिए बैठा, तब भीतर की गुप्तलीला प्रगट हो गई। पकानेवाले ने स्वीकार किया, कि जानबूझकर वह पराठे कच्चे बनाए गए। यह सब सेवक मेरे शुभ चिन्तक होकर जानबूझ कर मुझे कच्चे पराठे खिलाकर मेरा शुभ साधन करना चाहते थे, परन्तु में उनके काबू मे न आया। मैं बहुत भूखा और कमज़ोर था, फिर भी मैंने थोड़े ग्रासों से अधिक न खाया। मैं भूखा रहा, और फिर सहारनपुर में पहुंचकर कुछ और खाना खाया।

हरिद्वार में एक दिन मुझे बहुत पुराने और विकृत अवस्था - प्राप्त आटे की रोटी दी गई - यूं खाना

वहां प्राय: अच्छा पक सकता था। मुझे उस रोटी के खाने से बहुत तकलीफ हो गई। पूछने पर मालूम हुआ, कि जिस सेवक ने पहले कच्चे पराठे जान-बूझकर खिला देने का प्रयत्न किया था, उसी ने यह जानकर भी कि इस आटे की रोटी ठीक नहीं बनती थी, उसका बनाना बन्द न किया। इस प्रकार अनेक घटनाएं हैं, कि जिन में मेरे सम्बन्धी जान बूझकर भी मेरे साथ एक वा दूसरी बुराई करने में अपने भीतर कोई रोक मालूम नहीं करते रहे।

एक बार जब मैं धर्मप्रचार के लिए रावलपिंडी को जाने वाला था, तब एक पुराने कर्मचारी ने रवानगी से एक रात पहले अपनी एक प्रतिज्ञा भंग करके मुझे इतना आघात, क्लेश और दु:ख पहुंचाया, कि जिस का वर्णन नहीं हो सकता। मेरा हृदय और शरीर चकनाचूर हो गया - अगले दिन सुबह चलने के लिए मेरे भीतर ताकत न रही। अब मैं क्या करूं? लाचार अपने धर्मबल का सहारा लेकर मैं खड़ा हुआ, और उस कमर्चारी को पीछे छोड़कर (जिसका मेरे साथ जाना पहले स्थिर हो चुका था) मैं और दो जनों को साथ लेकर रवाना हो गया - कुछ काल तक ऐसे निर्दयी और प्रतिज्ञा-भंगकारी को मैंने आश्रम में स्थान न दिया।

बारह 2 चौदह 2 और सोलह 2 वर्ष और इससे भी अधिक काल तक धर्म शिक्षा और धर्म साधनों आदि के अनन्तर (निम्नश्रेणी सम्बन्धी दसों पापों से बचा रहकर भी) कोई कर्मचारी अब तक ऐसा नहीं, कि जो देवसमाजस्थापक के सर्वोच्च और सब से महान् उद्देश्य अथवा कार्य की महिमा को सहस्त्रांश भी अनुभव करता हो। सच यह है, कि उनके दिमाग और दिल देवसमाज-स्थापक और उसके सर्वोच्च कार्य की महिमा से खाली हैं। उन पर किसी और का अधिकार है। वह किसी और के हैं।

किस प्रकार एक 2 पुराना कर्मचारी अपने आपको मेरा नहीं, किन्तु किसी और का प्रमाणित करता है, उसका एक दृष्टान्त इस वक्त फिर मेरे सम्मुख है। मैं हरिद्वार को जा रहा था। मेरे कई साथी थे। मेरा कमरा "रिजर्व" था। सहारनपुर जाकर एक योरपियन टिकट-कलेक्टर ने अपने स्टेशन मास्टर के एक अनुचित हुक्म के अनुसार मेरे असबाब के विषय में कुछ अनुचित हस्तक्षेप करना चाहा। मैंने उसकी अनुचित बात न मानी। इतने में मेरे एक पुराने सेवक और कर्मचारी भी (जिनके साथ शायद 12 वर्ष से मेरा सम्बन्ध था) उस यूरेपियन के दर्शन करते ही भय व प्रेम के वश में होकर, झट उसके तरफदार और मुझ से बाग़ी बन गए। और मेरे पास आ कर कहने लगे, कि यह साहब जिस प्रकार आपको हुक्म देते है, उसी प्रकार आप मान लें। एक दो मिनट में यह सब लीला हो गई। मैंने उस यूरेपियन की बात हरगिज़ न मानी। हरिद्वार पहुंचकर रेल के बड़े अफ़सर को चिट्ठी के द्वारा उसके अनुचित हुक्म की शिकायत की गई। यह घटना तीर की न्याईं मेरे कलेजे में घुसकर पार हो गई। आज तक मेरे भीतर उसका ज़ख़्म नहीं भरा। परन्तु मुझको इस घटना से यह पता लग गया कि एक 2 जन मेरा सम्बन्धी बनकर परीक्षा के समय कहां तक मेरा सम्बन्धी रह सकता है! और ऐसा जन कहां तक मेरे विश्वास वा भरोसे का पात्र हो सकता है!!

इस घटना को छोड़कर और कितने ही कामों को इन लागों के सुपुर्द करके देखा है, कि अनेक बार बिना बार 2 तकाज़ा करने के एक 2 काम पूरा नहीं होता, और कोई काम किसी के सुपुर्द करके यह निश्चय करके शान्ति के साथ नहीं बैठ सकते, कि इसके भीतर उसकी नीचगतियों से ऊपर कोई कर्तव्य

बोध ऐसा वर्तमान है, कि वह उसके द्वारा अवश्य वह काम सन्तोषजनक और अच्छा करेगा, और ठीक समय पर करेगा।

मेरा वर्षों का तजरबा मुझे यह कहने के लिए मजबूर करता है, कि सरकारी नौकरी में अकसर लोग रुपए के लालच और सजा के भय से जितनी सावधानता, जितनी फ़िकर, जितनी जिम्मेवारी और जितनी उमदगी से काम करते हैं, उतनी सावधानता और ज़िम्मेवारी से और तो और मेरे कर्मचारी भी काम नही करते, क्योंकि, धर्मराज्य में काम करने के लिए कर्तव्य आदि विषयक जिन 2 उच्चबोधों की जहां तक प्रबल रूप में वर्तमान होने की आवश्यकता है, वह उनमें वर्तमान नहीं है।

एक दो कर्मचारियों को छोड़कर जो प्रचार कार्य में (वह भी कोई बहुत उच्च जीवन वा शिक्षा का प्रचार नहीं) अपेक्षाकृत जिम्मेवारी से काम करते हैं, और कर्मचारी इस समय तक जिस अवस्था में हैं, उसके विचार से वह समाज के सम्बन्ध में भी उसकी विविध आवश्यकताओं और उन्नति आदि के विषय में कोई चिन्ता नहीं करते, कोई तजवीज़े नहीं सोचते, और कोई संग्राम अनुभव नहीं करते। वह अपने जीवन के विचार से किसी के सम्बन्ध में ऐसे नहीं, कि जन पर कोई पक्का भरोसा हो सके। उनमें से वह, जो अपना सारा जीवन ही देवधर्म साधन और देवसमाज की सेवा के लिए समझते हैं, वह भी अपने प्रतिदिन की गति के विचार से ऐसे प्रतीत नहीं होते। क्या कम से कम प्रबल कर्तव्य बोध और हृदय के गाढ़ अनुराग के बिना, कोई मनुष्य किसी लाइन में कुछ भी कर सकने और कर दिखाने के योग्य हो सकता है? कदापि नहीं। और यह, और इसी प्रकार के और अत्यन्त आवश्यक उच्च बोध, जो उनमें आज तक कभी के उत्तम रूप से प्रस्फुटित और विकसित हो जाने चाहिये थे, वह उनमें इसलिए उत्पन्न नहीं हुए, कि विविध पापबोध और उच्च अनुराग दाता मूल सम्बन्धी के साथ, आज तक उनका कोई सच्चा और जीवन्त सम्बन्ध स्थापन नहीं हुआ - नहीं हुआ, इसीलिए उनमें यह सब कुछ पैदा नहीं हुआ। मैं देखता हूं, कि वर्षों से उनके जीवन में कोई सन्तोष - जनक उच्च परिवर्तन नहीं होता। कितनी ही वह नीचताएं और क्रियाएं जिनका अत्यन्त संक्षिप्त रूप से ऊपर वर्णन किया गया है, वर्षों से उनमें चली चलती हैं। उनके हृदय नाना प्रकार की अवज्ञाओं से अत्यन्त कठोर हो चुके हैं। उनके भीतर इस भाव ने, कि हम कर्मचारी हैं और हम औरों को सिखाने के लिए हैं, उनमें घमण्ड को पैदा करके उनके हृदय को बहुत खराब कर दिया है। वह जिस प्रकृत - धर्म के ग्रहण करने का स्वांग भरते है :

1) उस विज्ञानमूलक धर्म और उसकी तुलना में कल्पनामूलक मतों के अध्ययन (स्टडी) का उनमें कोई अनुराग वर्तमान नहीं है।
2) उन्हें क्या देवधर्म और क्या देवधर्मदाता के विषय में कोई नियमित और श्रेष्ठ ज्ञान नहीं।
3) उनमें अपने जीवन की नीचताओं को जान लेने के अनन्तर भी उनसे उद्धार पाने का कोई सन्तोषजनक संग्राम वर्तमान नहीं है।
4) उनमें क्या देवधर्म्म क्या उसके स्रोत और क्या देवसमाज, किसी के लिए ऐसा अनुराग वर्तमान नहीं, कि जो उनके अन्य नीचभावों पर अधिकार लाभ करके उन्हें लगातार उच्च बना सके, और उनके सम्बन्ध में उनके अपनत्व को मार कर उन्हें सच्चा अनुरक्त (devoted) और वफ़ादार रख सके।

यह सब दृश्य मेरे सन्मुख हैं, और कितने ही अर्से से मेरे सन्मुख हैं। इस दृश्य से मेरा हृदय विदीर्ण होता है। मेरा कलेजा फटता है। यह देश जो मुझे मेरे अद्वितीय कार्य के लिए अब तक योग्य आत्मा न दे सका, और मेरी अथाह शक्ति बहुत कुछ यूं हि अकारथ गई, इसके विचार से एक समय मुझे किसी प्रकार धीरज नहीं मिलती। क्या मेरी यह बेचैनी सच नहीं? क्या मैं धर्म का वह आविर्भाव नहीं, कि जिसकी धर्म विषयक सब शिक्षा, जिस का धर्म विषयक सब परिवर्तन और सब कार्य, अपनी सत्यता और श्रेष्ठता के विचार से अद्वितीय है। क्या यह सब कुछ बेक़दरी इसलिए है, कि मैं किसी कल्पना, किसी मिथ्या, किसी असत्य, किसी पालिसी को अपनी शिक्षा, अपने जीवन और अपने कार्य में स्थान नहीं देता? क्या विश्व के विकाश में मेरी सत्य-प्रियता और पूर्ण रूप से सत्य-प्रियता का समर्थन करने वाला कोई नहीं? क्या मेरा यह सब रोना-धोना और अतिशय परिश्रम करना, यूंहि वृथा जाने के लिए है? क्या इस काल में मेरा और मेरे कार्य का कोई अनुरक्त पैदा न होगा? क्या मेरे अद्वितीय और परम हितकर जीवनव्रत की सफलता के लिए प्रकृति में कोई समान नहीं? क्या मेरे महत् कार्य के सम्भालने और चलाने के लिए कुछ योग्य आत्मा न मिलेंगे? क्या जीवनव्रत लेने के बाद प्राय: 21 वर्ष तक अपने अद्वितीय जीवव्रत के लिए मेरा एक 2 इंच अर्पण होना, सब दो दिन का तमाशा प्रमाणित होगा? क्या विश्वगत प्रत्येक सम्बन्ध में शुभ लाने के लिए मेरे हृदय की गाढ़ आकांक्षा और गंभीर व्याकुलता सब निष्फल जाएंगे? नहीं, कदापि नहीं, विश्व में विकाश का नियम सच्चा और अटल है। मैं उसे देख रहा हूं। मेरा आविर्भाव उसी नियम के कार्य का फल है। मैं उनके लिए सच्चा रहा हूं, वह मेरे लिए मिथ्या क्योंकर हो सकता है? नहीं हो सकता, नहीं हो सकता। यह अटल नियम विश्व को विकसित करके उसके हर एक विभाग में एकता (मेल) ला रहा है। इस पृथ्वी के ऊपर विविध सम्बन्धों में अवश्य बहुत पाप और बहुत अनमेल है, परन्तु इससे ऊपर उच्च सूक्ष्म लोकों में पहुंचकर विकाश के नियम के द्वारा क्या भौतिक, क्या उद्भिद, क्या पशु, क्या मनुष्य, प्रत्येक जगत् के परस्पर सम्बन्धों में एकता राज्य करती है। यह महा तत्त्व मैंने देखा है। विश्व ने इसी महान् नियम के साथ एक करके मुझे उसकी महिमा गाने और उसके संस्थापन के निमित पूर्ण-संग्राम करने के लिए प्रगट किया है। मेरा यह संग्राम इस काल में अवश्य अनोखा संग्राम है, परन्तु उसके विजयी होने में कुछ सन्देह नहीं। समय के साथ 2 अनुकूल अवस्था आएगी। जब तक यदि मेरे अनुरागी आत्मा मुझे नहीं मिले, तो क्या कभी न मिलेंगे? कभी क्यों न मिलेंगे? अवश्य मिलेंगे। प्रत्येक जगत् के शुभ और कल्याण के लिए जिस महान नियम के लिए मैं सच्चा रहा हूं, जिसके साथ सच्चा रहने में मैंने कल्पित मत के अनुयाइयों से महा-दारुण दु:ख और महाघोर क्लेश पाए और सहे हैं, जिसके लिए सच्चा रहने से मैं लाखों आदमियों की घृणा और उनके झूठे इलज़ामों का निशाना बना हूं, जिसके लिए सच्चा रहने से मैंने अपने आपको इस पृथ्वी में सदा अकेला और मित्रहीन अनुभव किया है, वह नियम, अटल नियम, महा हितकर नियम, मुझे परित्याग नहीं कर सकता। वह अवश्य मेरे अद्वितीय आत्म-त्याग के अनुसार इस पृथ्वी में भी मनुष्यादि प्रत्येक जगत् के सम्बन्ध में परमहित अथवा परम कल्याण साधन करेगा।

(२८ अक्तूबर १९०३)

मुझमें आत्मिक शान्ति और देवानन्द

(श्रावण १९६३ विक्रमी)

आत्मा की प्रत्येक नीचगति-दायिनी शक्ति के अधिकार से मुक्त, और पूर्णाङ्ग धर्मजीवन विकाशक प्रत्येक उच्चशक्ति को प्राप्त होकर मेरे लिए परम शान्ति और परमानन्द लाभ करना अवश्यम्भावी था, इसीलिए ऐसी अमूल्य और महा हितकर शान्ति और ऐसा अमूल्य और महा हितकर आनन्द मुझे प्राप्त हुआ है।

देवजीवन को प्राप्त होकर मैं विश्व के प्रत्येक जगत् के उच्चविकाश का सच्चा आकांक्षी बन गया हूं। ऐसे प्रत्येक जगत् के साथ अपनी ओर से हितकर सम्बन्ध रखकर उसके हित के लिए यथासाध्य अपनी शक्तियों को काम में लाता हूं। प्रत्येक जगत् तक कुछ न कुछ अपने उच्च प्रभावों के पहुंचाने का साधन करता हूं। जहां कहीं रहता हूं, प्रतिदिन अपने आत्मा के उच्च प्रभाव अपने चारों ओर फैलाता हूं। उच्च चिन्ता और उच्च कार्यों में व्यस्त रहता हूं। इसलिए मेरे आत्मा में उच्च रस और देवानन्द उत्पन्न होता है। और जैसे जितनी बारिश अधिक हो, उतनी ही पृथ्वी अधिक गीली हो जाती है, वैसे ही जिस दिन जितनी शुभ चिन्ता और जितना शुभ उच्छवास अर्थात प्रेम और जितना शुभ कार्य अधिक हो, उस दिन मेरे हृदय में उतना ही अमृतरस अधिक उत्पन्न होता है, और वह आत्मा में अधिक सरूर पैदा करता है। यह सरूर उन नशों को न्याईं नहीं, कि जो विषाक्त (जहरीले) पदार्थों यथा, भंग, शराब, अफ़ीम, पोस्त, चरस और चण्डू आदि के महा हानिकारक सेवन से पैदा होता है। यह उन सबसे ऊपर धर्म सम्बंधी नाना उच्च भावों और अनुरागों की उत्पत्ति से पैदा होता है। यही सरूर स्वर्गीय सरूर अर्थात देवानन्द है। यह आनन्द धर्म जीवन से उत्पन्न होता है। और प्रत्येक प्रकार के विष से रहित और आत्मा के लिए सर्वथा हितकर होता है। यह उच्च रस सब प्रकार की मैल से विशुद्ध होता है। यह रस जीवनदायक होता है और इसीलिए अमृत कहलाता है। बिना नीचगतियों से उद्धार पाने, हृदय को पवित्र और निर्मल करने और एक वा दूसरे प्रकार के परहित साधन में रत रहने के यह अमृत-स्रोत किसी के हृदय में नहीं फूटता, और बिना पूर्ण उद्धार और धर्म के पूर्ण अंगों में विकाश पाने के पूर्णत: उन्नत नहीं होता।

परन्तु यद्यपि शरीर के पूर्णत: स्वस्थ और निरोग और पूर्ण गठन-प्राप्त होने पर उसे अपने किसी अंग वा रोग के द्वारा कोई दु:ख नहीं पहुंचता, तथापि यदि किसी पहाड़ से कोई पत्थर ऊपर आ पड़े वा कोई दुष्ट जन उसे ढेला, वा लाठी, वा छुरी मारे, तो उसके आघात से अवश्य कलेश पहुंचता है, उसी प्रकार मेरा आत्मा यद्यपि प्रत्येक रोग से मुक्त और प्रत्येक उच्च अंग में विकाश पाकर मेरे हृदय में अमृत उत्पन्न करता है, मुझे जीवनरस देकर महा हितकर शान्ति और आनन्द प्रदान करता है, तो भी इस पृथ्वी के लाखों नीचलक्ष्य और नीचगति परायण आत्माओं में रहकर बीच में उनकी नीचगतियों से एक वा दूसरे प्रकार का दुखदाई आघात पाना मेरे लिए अवश्यम्भावी है, और प्रत्येक जगत का हिताकांक्षी और हितकर्ता बन कर मेरे लिए ऐसे प्रत्येक दु:ख को सहना वा बरदाश्त करना भी आवश्यक है। ऐसे आघातों के लगने से अवश्य मुझे दु:ख पहुंचता है। मेरे सेवक गण

भी जब मेरे, अथवा आपस से एक दूसरे के सम्बन्ध में, कोई अनुचित क्रिया करते हैं, अथवा जिन्हें मैं उन्नत अवस्था में देखना चाहता हूं, वह उन्नत होने के स्थान में अधोगति की ओर जाते हैं, तो उससे ऐसी क्रिया से अवस्था के अनुसार थोड़ा वा बहुत क्लेश मिलता है। इसी प्रकार मेरे स्थूल शरीर में जब किसी प्रतिकूल मौसम, वा रोग वा किसी अन्य कारण से क्लेश होता है, तो वह भी अनुभव होता है। ऐसे कुछ दुःखों को छोड़कर मेरा आत्मा उपरोक्त दुर्लभ शान्ति वा देवानन्द से अनेक समय भरपूर रहता है।

परलोक सम्बन्धी सूक्ष्म लोकों में धर्म लोकों का जितना उच्च से उच्च विकाश हुआ है, उतना ही उन लोकों के क्या भौतिक, क्या उद्भिद्, क्या पशु और क्या मनुष्य जगत् सम्बन्धी अस्तित्वों में एकता का विकाश और परस्पर मेल स्थापन हुआ है। इसीलिए बहुत उच्च लोकों में प्रत्येक जगत् के साथ प्रत्येक प्रकार का सम्बन्ध सर्वथा हितकर और आनन्दकर बन गया है। वहां पर यहां की न्याईं नीचगति-जनित न कोई शारीरिक दुख रहता है, और न आत्मिक। प्रत्येक सम्बन्ध प्रत्येक के लिए सब प्रकार से हितकर और आनन्दकर प्रमाणित होता है। वहां के सब अस्तित्वों की सब क्रियाएं एक दूसरे के लिए विकाशकारी होती हैं। वहां एकता और विकाश का ही राज्य है। वहां जो कुछ है, सब सुन्दर, रसमयी, शुभकर और आनन्दमय है। मुझे यहां रहकर शुभ का राज्य लाने में और सब प्रकार के अशुभ के साथ संग्राम करने में उपरोक्त प्रकार का जो 2 कुछ दुख मिलता है, उसका एक दिन अन्त हो जायेगा, और सब प्रकार से कुशल रहने पर मेरी पुर्णतः धर्मजीवन जनित अमूल्य और हितकर शान्ति और मेरा अमृतरस-जनित पूर्णाङ्ग हितकर देवानन्द, एक दिन निर्विघ्न रूप से मेरे हृदय में वास करेगा।

नाना दुर्घटनाओं में मेरी आन्तरिक अवस्था

"समय के साथ सब ठीक हो जायेगा।"

(माघ १९६२ वि०)

विश्व एक है। उसका प्रत्येक विभाग एक दूसरे से जुड़ा हुआ है। इसीलिए विश्व के भीतर उसकी नाना प्रकार की घटनाओं में परस्पर सम्बन्ध है। यहां उसमें बुरी घटनाओं की अपनी लड़ी पाई जाती हैं, और एक 2 बुरी घटना के साथ बहुत सी बुरी घटनाएं जुड़ी हुई होती हैं, वहां उसमें भली घटनाओं की भी अपनी 2 लड़ियां हैं, और एक 2 भली घटना के साथ कितनी हि और भली घटनाएं योग रखती हैं। मैंने इस तत्व को अवलोकन किया है। उसे अपने और औरों के जीवन में उपलबध किया है। मैंने देखा है, कि उच्चगति में चलते समय एक वा दूसरी प्रकार की साधारण कठिनाइयों को छोड़ कर मेरे रास्ते में ऐसी-ऐसी दुर्घटनाएं आई हैं और ऐसी 2 रोकें और मुसीबतें पैदा हुई है, कि जिनके याद करने से भी दिल हिल जाता हैं। मुझे एक-2 बार इस प्रकार प्रतीत होता रहा है, कि मानों मेरे पांव के नीचे से ज़मीन निकली जाती है, और हर एक बात मेरे सम्बन्ध में उलटी जा रही है। एक रोक के बाद दूसरी, दूसरी के बाद तीसरी, और तीसरी के बाद चौथी रोक पैदा होती जाती है। मानों दुर्घटनाओं और विघ्नों की एक लड़ी बन्धी हुई है। और यह सब दुर्घटनाएं और

विपदें ज़ोरदार आवाज़ के साथ यह कह रही हैं, कि तुम्हारे लिए कामयाबी संभव नहीं हैं। ऐसी अवस्था में चारों ओर से ऐसे प्रभाव पड़ने लगे हैं, कि मेरा सब तरफ़ों से रास्ता बन्द है। कहीं से बच निकलने और अपने उच्च उद्देश्य में सफल काम होने की मेरे लिए कोई आशा नहीं है। चारों ओर अंधकार! चारों ओर निराशा!! परन्तु इस महा भयानक और महा दुःखदाई अवस्था के आने पर भी मेरे भीतर की ज्योति बुझ नहीं गई। उसने मेरा साथ नहीं छोड़ा। और जैसे श्रावण भादों के दिनों में निहायत काली घटाओं के छा जाने और पृथ्वी के अन्धकार से आवृत्त होने पर भी, एक 2 बार बिजली खूब ज़ोर से चमक कर अपनी छटा और अपनी प्रभा दिखा जाती है, उसी प्रकार मैंने महा भयानक, महा दुःखदाई और निराशा-जनक घटनाओं के घोर तम से घिरे होने पर भी, अपने हृदय के भीतर उच्च ज्योति की चमक में, इस तत्व को बार 2 देखा और अनुभव किया है, और भीतर के जोश से अपने मुंह के द्वारा भी कई बार प्रगट किया, कि "समय के साथ सब ठीक हो जाएगा।" (All well come right in time) और यह महा सत्य ठीक प्रमाणित हुआ है - अर्थात् मेरी दुर्घटनाओं की लड़ी टूटने लगी है - विघ्न घटने लगे हैं, भय और निराशा का अन्धकार विनष्ट होने लगा है, आकाश साफ़ हो गया है, और मेरे जीवन का पथ और भी अधिक उज्ज्वल रूप में खुल गया है। अनुकूल घटनाएं उत्पन्न हो गई हैं और प्रतिकूल घटनाएं नष्ट हो गई है। मेरी आन्तरिक ज्योति ने अन्धकार पर, मेरी सत्यनिष्ठा ने असत्य पर, और मेरे शुभ भाव ने अशुभ पर जय लाभ की है। यह जैसे विश्व के विकाश में एक अटल नियम है, वैसे हि मेरे जीवन का तजर्बा भी है। इस महा सुन्दर और अटल नियम के अनुसार उच्चगति-परायण आत्मा अन्त में हमेशा अपने उच्च उद्देश्य और जीवन के उच्च-पथ में विजयी होता है।

तरस्ती थी दुनिया ज़हूर आपका हो, दिलों में दिमाग़ों में नूर आपका हो, हुई आशा पूरी हुए आप ज़ाहिर, सत्य धर्म शिक्षक वा रुहानी माहिर। सही धर्म शिक्षा जो दुनिया में आई, है जिसमें मुकम्मल सचाई, भलाई, जहां में फक़त आपकी ज़ात लाई, कल्पना कल्पना ही थी वर्ना छाई। नदी, नालों, तालाबों पर थे नहाते, थे कुम्भ और अमावस के मेलों में जाते, वहां वक्त और मालाज़र थे लुटाते, समझते थे पापों से मुक्ति हैं पाते। गुनाहों से उल्टा लगन बढ़ रही थी, दिलों पर सयाही अधिक चढ़ रही थी। यह हालत तरसनाक जब तुमने देखी, न भाई तुम्हें नौकरी एक पल भी, लिया जगत हित का व्रत धार झट ही, और अहले मज़ाहिब में की यह मुनादी, नहीं तुझको मंजिल पर पहुँच सकेगा, कि जाता है उल्टी तरफ यह तो रास्ता। बुरा लोगों ने ऐसा कहना मनाया, लगे गालियां देने और मुंह चिढ़ाया। कहा नास्तिक और गुमराह बताया, गर्ज़ जी भरके तुमको सताया, तुम्हारे हवा ख़्वाहों को राह में पीटा, कचहरी के कांटों पर तुमको घसीटा, आफ़त में आफ़त उठाई है तुमने, जहां की मुसीबत घटाई है तुमने, अजब फैज़ की रौ बहाई है तुमने, हमें राह सच्ची दिखाई है तुमने, न क्यों तुम पें सत्गुरू जी कुर्बान जाएं, तराने न क्यों तुमरी महिमा के गाएं।

Published on 5th of the month
20
Regd. Postal No.CHD /0077/ 2018-2020
Regd. with Registrar News Paper No. 72258/88

महोत्सव का कार्यक्रम

शुक्रवार 21 दिसम्बर 2018

प्रवेश सभा – 4.30 बजे सायं

शनिवार 22 दिसम्बर 2018

1– पहली सभा – 9.30 बजे प्रात:

विषय – परम पूजनीय भगवान देवात्मा का परम आवश्यक जीवनदायक सम्बन्ध

2– पब्लिक लैक्चर – 4.00 बजे सायं

3– संगीत सभा – 7.30 बजे सायं

रविवार 23 दिसम्बर 2018 (महोत्सव का विशेष दिन)

सूर्य निकलने के समय जो कि आत्मिक जगत के सूर्य परम पूजनीय भगवान देवात्मा के शुभ जन्म का समय है, बैंड, बाजा, कीर्तन, शुभकामनाएं और जय ध्वनि – 6.30 बजे प्रात:

1– पहली सभा 8.30 बजे प्रात:

विषय – भगवान देवात्मा का परम लक्ष्य, उसकी सिद्धि के लिए उनका तप, उसके सम्बन्ध में हमारी ओर से कुर्बानियों की आवश्यकता । धन और जन की अपील ।

2– दूसरी सभा – 2.00 बजे दोपहर – बच्चों की सभा और कुछ भजन

3– पब्लिक लैक्चर – 4.00 बजे सायं

4– दीप माला – 6.00 बजे सायं

5– आलोचना सम्बन्धी सुझाव (लिखकर भी दे सकते हैं)

सोमवार, 24 दिसम्बर 2018

1– पहली सभा – 8.30 बजे प्रात: सेवक, सेविकाओं का ग्रहण, श्रेणियों में उन्नति तथा पारिवारिक अनुष्ठान

2– भाव प्रकाश

3– देव आरती का गान और जय ध्वनि

नोट :–

1. कृपया सेवक–सेविका अपनी एकाकारियों के साथ शामिल हों ।
2. आवश्यकता पड़ने पर किसी कार्यक्रम में परिवर्तन किया जा सकता है ।
3. यात्रीगण कृपया अपने बिस्तर अवश्य साथ लाएँ।
4. अपने आने की पहले संख्या समेत सूचना देने की कृपा करें।

फोन : 0172–2716914, 9915594601, 9463836617

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए, (लाईफ़ वर्कर) मंत्री–देव–धर्म–मिशन, प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने **Surya Laser Den, Chandigarh** से छपवाकर म. न. 3154, सैक्टर 21–डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।

Book Posts